समक्ष वी.के. बाली और के.एस. गैरेवाल, माननीय न्यायमूर्ति।

जोग धीएन — याचिकाकर्ता

बनाम

वित्तीय आयुक्त, राजस्व हरियाणा एवं अन्य, — प्रतिवादी

सिविल व्रिट याचिका नंबर *2004* का *1582*

7 जनवरी, 2005

भारत का संविधान, 1950– अनुच्छेद 226 – पंजाब भूमि राजस्व अधिनियम, 1887 –धारा 15 (c) -प्रतिवादी क्रमांक 4 की कलेक्टर द्वारा लंबरदार पद पर नियुक्ति – कमिश्नर ने कलेक्टर के आदेश को पलटते हुए याचिकाकर्ता को नियुक्त कर दिया– वित्तीय आयुक्त ने प्रतिवादी संख्या 4 की अपील खारिज कर दी– प्रतिवादी नंबर 4 वित्तीय आयुक्त द्वारा एक समीक्षा आवेदन पर मामले को नए सिरे से तय करने के लिए कलेक्टर को भेज दिया गया– आयुक्त और वित्तीय आयुक्त द्वारा पारित आदेशों में पेटेंट त्रुटि कि प्रतिवादी नंबर 4 एक हत्या के मामले में शामिल था– दरअसल जो याचिकाकर्ता इस मामले में शामिल था – वित्तीय आयुक्त द्वारा मामले को कलेक्टर को भेजने के आदेश विरोधाभासी हैं और इससे प्रतिवादी नंबर 4 के साथ स्पष्ट अन्याय हुआ है– प्रतिवादी क्रमांक 4 को लंबरदार नियुक्त करने के कलेक्टर के आदेश में कोई नियमों का उल्लंघन या विकृति नहीं है - आयुक्त एवं वित्तीय आयुक्त द्वारा पारित आदेशों को रद्द करते हुए याचिका खारिज कर दी गई।

अभिनिर्णित, चौथे प्रतिवादी के साथ पूर्ण अन्याय किया गया है। यह कानून के प्रस्ताव के रूप में बहुत अच्छी तरह से स्थापित है और यहां तक कि वित्तीय आयुक्त ने भी इसका उल्लेख किया है कि लंबरदार की नियुक्ति के मामले में कलेक्टर की पसंद को अंतिम माना जाएगा और इसे केवल तभी शून्य किया जा सकता है जब वह नियमों के खिलाफ हो। कमिश्नर द्वारा कलेक्टर की पसंद को मुख्य रूप से इस आधार पर छेड़ा गया था कि प्रतिवादी नंबर 4 एक हत्या के मामले में शामिल था और उस सिलसिले में एक साल से अधिक समय तक हिरासत में रहा था और ऐसे लोग उन लोगों के बीच कोई विश्वास पैदा नहीं करेंगे जिनके प्रति वह अंततः प्रतिनिधित्व करेगा। जब विद्वान आयुक्त और वित्तीय आयुक्त द्वारा की गई एक स्पष्ट गलती बाद के नोटिस में आई और विद्वान वित्तीय आयुक्त को गलती का एहसास हुआ और उन्होंने माना कि यह याचिकाकर्ता है जो एक हत्या के

मामले में शामिल था, न कि प्रतिवादी नंबर 4, जो तथ्य अब रिट याचिका में ही स्वीकार कर लिया गया है, यह आश्चर्यजनक है कि याचिकाकर्ता को लंबरदार के पद पर नियुक्त होने के लिए उपयुक्त व्यक्ति कैसे माना गया।

(पैरा 15)

आगे कहा गया कि लंबरदार की नियुक्ति के मामले में कलेक्टर की पसंद अंतिम होती है। कलेक्टर के आदेश में किसी भी स्तर पर नियमों का उल्लंघन अथवा विकृति प्रदर्शित नहीं की गयी है। कलेक्टर के आदेश को मुख्य रूप से इस आधार पर रद्द कर दिया गया था कि प्रतिवादी नंबर 4 एक हत्या के मामले में शामिल था, जो तथ्य बिल्कुल गलत निकला। दरअसल, यह याचिकाकर्ता ही एक हत्या के मामले में शामिल था। यदि विद्वान आयुक्त और वित्तीय आयुक्त द्वारा पारित आदेशों में ऐसी कोई पेटेंट त्रुटि हुई थी, तो ऐसे आदेशों को योग्यता के आधार पर बिना किसी चर्चा के रद्द कर दिया जाना चाहिए था क्योंकि कलेक्टर की पसंद को बरकरार रखा जाना चाहिए था।

(पैरा 15)

इसके अलावा, यह कहा गया कि एक बार जब न्यायालय को पता चलता है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत निहित अधिकार क्षेत्र का उपयोग करते हुए किसी पक्ष के साथ अन्याय हुआ है, तो वह उसे पूर्ववत करने के लिए हमेशा खुला है। न्यायालय के बचाव में आने से पहले संबंधित पक्ष के लिए रिट याचिका के माध्यम से आंदोलन करना आवश्यक नहीं है। यदि अधूरे न्याय का गठन करने वाले तथ्य उच्च न्यायालय के ध्यान में आते हैं, तो उसके पास ऐसे आदेशों को संशोधित करने या रद्द करने की पर्याप्त शक्ति होगी। उच्च न्यायालय अकेले संविधान के भाग III द्वारा प्रदत्त किसी भी अधिकार के प्रवर्तन के लिए रिट, आदेश या निर्देश जारी नहीं करता है। यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 में निहित प्रावधानों के मद्देनजर किसी अन्य उद्देश्य के लिए रिट, आदेश या निर्देश जारी कर सकता है। पार्टियों के बीच न्याय करने के उद्देश्य से 'किसी अन्य उद्देश्य के लिए' शब्द निश्चित रूप से इसमें शामिल होंगे।

(पैरा 17)

एस.एस. गोडारा, एडवोकेट, याचिकाकर्ता के लिए।

निर्णय

वि.के बाली,माननीय न्यायमूर्ति।

(1) याचिकाकर्ता जोग धियान ने उप-तहसील रादौर के गांव घेसपुर के तत्कालीन लंबरदार श्री अमर सिंह की मृत्यु के कारण रिक्त हुए लंबरदार के पद पर नियुक्ति की मांग की। जबकि, कलेक्टर ने, अपने आदेश दिनांक 7 जून, 2001, अनुलग्नक पी-2 के तहत, प्रक्रिया का पालन करने के बाद और याचिकाकर्ता और एक हरि चंद की उम्मीदवारी पर विचार करने के बाद, आयुक्त की पसंद के अनुसार, लंबरदार के रूप में बाद वाले को नियुक्त करने को प्राथमिकता दी। आदेश के खिलाफ याचिकाकर्ता द्वारा की गई अपील में, अनुलग्नक पी-2, याचिकाकर्ता के विरुद्ध गया। आयुक्त द्वारा दिनांक 26 फरवरी, 2002 को पारित आदेश, अनुलग्नक पी-3 से विवश होकर हरि चंद ने विद्वान वित्तीय आयुक्त के समक्ष अपील दायर की, जिन्होंने 8 अप्रैल, 2003 को इसे खारिज कर दिया (अनुलग्नक पी-4)। हरि चंद ने आदेश, अनुलग्नक पी-4, दिनांक 8 अप्रैल, 2003 की समीक्षा की मांग की और 22 जुलाई, 2003 को, विद्वान वित्तीय आयुक्त ने, उस स्तर पर, कोई नोटिस जारी किए बिना या याचिकाकर्ता को सुने बिना, निम्नलिखित आदेश पारित किया: -

“तर्क सुने गए। समीक्षा आवेदन की अनुमति है। मामले को योग्यता के आधार पर बहस के लिए 26 अगस्त, 2003 को निर्धारित किया गया है। यदि आवश्यकता हुई, तो प्रतिवादी को बुलाने का निर्णय उसके बाद किया जाएगा:-

(2) वास्तव में, याचिकाकर्ता को एक नोटिस भेजा गया था, - आदेश दिनांक 2 दिसंबर, 2003, अनुलग्नक पी-6 के माध्यम से, वित्तीय आयुक्त ने अपने पहले के आदेश दिनांक 8 मई, 2003 को संशोधित किया और मामले को नये सिरे से निर्णय लेने के लिए कलेक्टर को भेज दिया।

(3) तथ्यों की पृष्ठभूमि में, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, लंबरदार के पद पर नियुक्ति की मांग करते समय, याचिकाकर्ता, स्वाभाविक रूप से, अनुच्छेद के तहत उसके द्वारा दायर वर्तमान रिट में आदेशों, अनुलग्नक पी-5 और पी-6 को रद्द करने की मांग करता है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 226, दो आधारों पर, पंजाब भूमि राजस्व अधिनियम, 1887 की धारा 15 के तहत समीक्षा से संबंधित शक्तियों के तहत वित्तीय आयुक्त को अपने पिछले आदेश को उसे

नोटिस दिये बिना संशोधित/समीक्षा करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था और दूसरी बात, कि वह हरि चंद की तुलना में कहीं अधिक मेधावी है, जिसे कलेक्टर द्वारा लंबरदार के रूप में नियुक्त किया गया था, जिसके बाद से उस आदेश को अनुभवी आयुक्त द्वारा रद्द कर दिया गया था और जिसे, पहले उदाहरण में, विद्वान वित्तीय कमिश्नर द्वारा भी बरकरार रखा गया था।

(4) जब मामला 30 जनवरी, 2004 को हमारे सामने सुनवाई के लिए आया, तो प्रथम दृष्टया हमारा विचार था कि आयुक्त और वित्तीय आयुक्त द्वारा की गई टिप्पणियों के मद्देनजर याचिकाकर्ता को लंबरदार के रूप में नियुक्त नहीं किया जा सकता है। ऐसा देखते हुए, हमने 30 जनवरी, 2004 को एक विस्तृत आदेश पारित किया और याचिकाकर्ता को नोटिस जारी किया कि क्यों न कलेक्टर द्वारा पारित आदेश, अनुलग्नक पी-2 को बरकरार रखा जाए और बाद के सभी आदेशों को रद्द न किया जाए। हम फैसले के बाद के हिस्से में अपनी टिप्पणियों का उल्लेख करेंगे जो हमने 30 जनवरी, 2004 को आदेश पारित करते समय की थीं। ऐसा प्रतीत होता है कि 26 मार्च 2004 को मामले की सुनवाई होने से पहले ही रोस्टर में बदलाव कर दिया गया था। यह स्पष्ट है कि विद्वान वकील ने बेंच को सूचित नहीं किया, कि याचिकाकर्ता को नोटिस दिया गया है कि कलेक्टर द्वारा पारित आदेश, अनुलग्नक पी-2, को क्यों बरकरार नहीं रखा जाए और बाद के सभी आदेशों को क्यों नहीं रोका जाए। उन्होंने बस यह बयान दिया कि उन्हें रिट याचिका वापस लेने के निर्देश हैं। उनके द्वारा दिए गए बयान पर, इस न्यायालय की डिवीजन बेंच जिसमें स्वतंत्र कुमार और अजय कुमार मित्तल, माननीय न्यायमूर्ति शामिल थे, ने 26 मार्च, 2004 को निम्नलिखित आदेश पारित किया: -

"याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित वकील का कहना है कि उन्हें इस रिट याचिका को वापस लेने का निर्देश दिया गया है। वापस ली गई याचिका को खारिज कर दिया गया है।"

(5) ऐसा प्रतीत होता है कि उसी दिन, 30 जनवरी, 2004 को इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश पीठ के संज्ञान में आया, और इसलिए, पीठ ने उसी दिन निम्नलिखित आदेश दर्ज किया:-
“विद्वान वकील ने उल्लेख किया था और हमने दिन के पहले भाग में उपरोक्त आदेश पारित किया था। अब यह न्यायालय के संज्ञान में लाया गया है कि 30 जनवरी, 2004 को इस न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा याचिकाकर्ता को नोटिस जारी करते हुए एक विस्तृत आदेश पारित किया गया था कि कलेक्टर द्वारा पारित आदेश अनुलग्नक पी-2 को बरकरार क्यों न रखा जाए और बाद के सभी आदेशों को उस आदेश में बताए गए कारणों से रद्द नहीं किया जाएगा।

आदेश में उल्लिखित कारणों से, हमें नहीं लगता कि हमें याचिकाकर्ता को बिना शर्त या अन्यथा रिट याचिका वापस लेने की स्वतंत्रता देनी चाहिए थी। हम यह भी महसूस करते हैं कि याचिकाकर्ता की ओर से पेश हुए विद्वान वकील का यह कर्तव्य था कि वह अदालत के समक्ष सही और सही तथ्यों का खुलासा करें। हमने अदालत के कर्मचारियों को यह भी निर्देश दिया था कि वे वकील को आज फिर से अदालत में पेश होने के लिए सूचित करें, हालांकि, कर्मचारियों के प्रयास निरर्थक साबित हुए हैं।

इस मामले को 2 अप्रैल, 2004 को निर्देशों और पुनः सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया जाए। रजिस्ट्री याचिकाकर्ता के वकील को बिना तलबाना शुल्क के नोटिस जारी करेगी और उसकी सेवा सुनिश्चित करेगा।"

(6) जब मामला 2 अप्रैल, 2004 को खंडपीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आया, तो निम्नलिखित आदेश पारित किया गया:-
“हमने याचिकाकर्ता के वकील को सुना है।

30 जनवरी, 2004 के आदेश के मद्देनजर, 26 मार्च, 2004 के आदेश को पारित करने की वांछनीयता की जांच करनी पड़ सकती है। इसीलिए, हमने रजिस्ट्री को याचिकाकर्ता के वकील को सूचित करने के बाद इस मामले को सुनवाई के लिए सूचीबद्ध करने का निर्देश दिया था।

उपरोक्त परिस्थितियों को देखते हुए, यह उचित होगा कि मामले की सुनवाई उस पीठ द्वारा की जाए जिसने 26 मार्च, 2004 को आदेश पारित किया था (ऐसा प्रतीत होता है कि 26 मार्च, 2004 का गलत उल्लेख किया गया है। यह 30 जनवरी, 2004 होनी चाहिए थी)।

माननीय मुख्य न्यायाधीश से आदेश प्राप्त कर 9 अप्रैल 2004 को लिस्ट करें।”

(7) हालाँकि, इसके बाद यह मामला 7 मई, 2004 को उसी पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आया। पीठ ने इसके बाद 26 मार्च, 2004 और 2 अप्रैल, 2004 को पारित दो आदेशों को दोहराया, जिसे इस प्रकार दर्ज किया गया: -

“याचिकाकर्ता के विद्वान वकील को सुनने के साथ-साथ रिकॉर्ड की जांच करने के बाद, हमारा विचार है कि न्यायिक औचित्य के सिद्धांत के लिए यह आवश्यक होगा कि इस मामले को माननीय श्री न्यायमूर्ति वी.के. की अध्यक्षता वाली पीठ, माननीय मुख्य न्यायाधीश बाली के आदेशों के अधीन और उनके आदेश प्राप्त करने के बाद लिस्ट किया जाना चाहिए।”

(8) जैसा कि ऊपर विस्तृत रूप से बताया गया है, तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह मामला उसी पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आया है जिसने 30 जनवरी, 2004 को आदेश पारित किया था। हालाँकि, मामला जब 15 जुलाई, 2004 को

हमारे सामने सुनवाई के लिए आया था तब याचिकाकर्ता के वकील उपलब्ध नहीं थे और फिर भी, न्याय के हित में, हमने उस तारीख पर आदेश स्थगित कर दिया और मामले को 19 अगस्त, 2004 को सूचीबद्ध करने का निर्देश दिया। उपरोक्त तारीख पर, याचिकाकर्ता के वकील ने स्थगन के लिए एक अनुरोध किया और मामले को 9 सितंबर, 2004 तक के लिए स्थगित कर दिया गया। स्थगित तिथि पर, एक बार फिर याचिकाकर्ता के वकील द्वारा किए गए अनुरोध पर, मामले को 16 सितंबर, 2004 तक के लिए स्थगित कर दिया गया। हालांकि, मामला सुनवाई के लिए आया। 17 सितंबर, 2004 और याचिकाकर्ता द्वारा रिट याचिका वापस लेने की प्रार्थना खारिज कर दी गई और मामले को 24 सितंबर, 2004 को बहस के लिए सूचीबद्ध करने का आदेश दिया गया। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, याचिकाकर्ता के वकील ने परिचालित करके स्थगन की मांग की। मामले को 8 अक्टूबर, 2004 तक के लिए स्थगित कर दिया गया। 8 अक्टूबर, 2004 को एक बार फिर स्थगन के लिए एक लिखित अनुरोध आया और मामले को 26 अक्टूबर, 2004 तक के लिए स्थगित कर दिया गया। स्थगित तिथि पर, एक बार फिर स्थगन के लिए एक अनुरोध किया गया जिस पर, हमने निम्नलिखित क्रम दर्ज किया:-

"इस आदेश को हममें से एक (वी.के. बाली, माननीय न्यायमूर्ति) और राजीव भल्ला, माननीय न्यायमूर्ति की डिवीजन बेंच द्वारा पारित 30 जनवरी, 2004 के आदेश और डिवीजन बेंच द्वारा पारित 7 मई, 2004 के आदेश के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए। इन दो आदेशों के पारित होने के बाद, 17 सितंबर, 2004 को आदेश पारित कर याचिकाकर्ता की याचिका वापस लेने के आवेदन को खारिज कर दिया गया। इसके बाद, विद्वान वकील स्वतंत्र रूप से स्थगन की मांग करने लगे। जब मामला 24 सितंबर, 2004 को सुनवाई के लिए आया तो स्थगन के लिए लिखित अनुरोध प्रसारित किया गया। जब मामला 8 अक्टूबर, 2004 को सुनवाई के लिए आया तो लिखित अनुरोध एक बार फिर दोहराया गया। आज फिर, स्थगन के लिए लिखित अनुरोध प्रसारित किया गया है , जो इस प्रकार पढ़ता है:-

"अधोहस्ताक्षरी को मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, पटियाला हाउस, नई दिल्ली के सामने पेश होना होगा। 26 अक्टूबर 2004 को अधोहस्ताक्षरी दिल्ली के लिए प्रस्थान करेंगे। माननीय न्यायालय को हुई असुविधा के लिए खेद है। इसलिए, 2 सप्ताह के लिए स्थगन की प्रार्थना की जाती है।"

हमें स्थगन का कारण उचित नहीं लगता। यदि विद्वान वकील को मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होना था, तो यह वह स्थान है जहां वकील को आवेदन दायर करने के लिए चुनना चाहिए था, न कि इस न्यायालय के समक्ष। हमने पहले जो आदेश पारित किए हैं और वर्तमान परिस्थितियों से, हम प्रथम दृष्टया यह मानते हैं कि विद्वान वकील इस न्यायालय के समक्ष मामले में बहस से बचने की कोशिश कर रहे हैं। हालाँकि, न्याय के हित में, हम इस मामले को 7

दिसंबर, 2004 के लिए स्थगित करते हैं, लेकिन यह स्पष्ट करते हैं कि कानून के अनुसार उचित आदेश उस तारीख को पारित किए जाएंगे और स्थगन के किसी भी अनुरोध पर विचार नहीं किया जाएगा।

(9) स्थगित तिथि पर, याचिकाकर्ता के वकील की ओर से उपस्थित वकील श्री परवीन भादू ने अदालत को सूचित किया कि बहस करने वाले वकील पीजीआई में अपनी बेटी की देखभाल कर रहे थे। 26 अक्टूबर, 2004 के आदेश के बावजूद उसमें स्पष्ट उल्लेख है कि स्थगन के किसी भी अनुरोध पर विचार नहीं किया जाएगा। हालाँकि, हमने मामले को फिर से 16 दिसंबर, 2004 तक के लिए स्थगित कर दिया। एक बार फिर, मामले को 17 दिसंबर, 2004 तक के लिए स्थगित कर दिया गया। 17 दिसंबर, 2004 को, वकील ने फिर से स्थगन की मांग की और इस बार इस आधार पर कि याचिकाकर्ता ने मामला वापस ले लिया है। यदि यह स्थगन का आधार था, तो हम यह समझने में असफल रहे कि पहले के अवसरों पर पूरी तरह से अलग आधार पर स्थगन क्यों मांगा गया था। हम और कुछ नहीं कहते हैं और मामले को वहीं छोड़ देते हैं लेकिन मामले को आगे स्थगित करने की वकील की प्रार्थना पर विचार नहीं करते हैं।

(10) जहां तक याचिकाकर्ता के वकील का तर्क है कि वित्तीय आयुक्त को याचिकाकर्ता को नोटिस जारी किए बिना अपने आदेश की समीक्षा करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, तो इसे पंजाब भूमि राजस्व अधिनियम, 1887 की धारा 15 के प्रावधानों से समर्थन मिलता है। अधिनियम की धारा 15 की उप-धारा (सी) इस प्रकार है:-
"किसी आदेश को तब तक संशोधित या उलटा नहीं किया जाएगा जब तक कि इससे प्रभावित पक्षों को आदेश के समर्थन में उपस्थित होने और सुनवाई के लिए उचित नोटिस नहीं दिया गया हो।"

(11) हालाँकि, कानूनी स्थिति, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए विवाद के अनुरूप हो सकती है, लेकिन तथ्यों पर हम पाते हैं कि आदेश, अनुलग्नक पी-6, अंततः संशोधित आदेश, अनुलग्नक पी-4, याचिकाकर्ता को नोटिस जारी करने और उनके वकील को भी सुनने के बाद पारित किया गया। यह तथ्य विवाद में नहीं है और आदेश, अनुलग्नक पी-6 को पढ़ने से भी स्पष्ट हो जाता है। यह सच है कि 22 जुलाई, 2003 को, विद्वान वित्तीय आयुक्त ने समीक्षा आवेदन की अनुमति दी, लेकिन साथ ही, उन्होंने मामले को गुण-दोष के आधार पर बहस के लिए 26 अगस्त, 2003 के लिए निर्धारित किया और आगे उल्लेख किया कि यदि आवश्यकता हुई, तो प्रतिवादी को बुलाया जाएगा। उसके बाद निर्णय लिया। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, याचिकाकर्ता को वास्तव में बुलाया गया था और उसके वकील को भी सुना गया था। आदेश, अनुलग्नक पी-5, दिनांक 22 जुलाई, 2003, भले ही तकनीकी रूप से गलत हो सकता है, लेकिन इससे सार में कोई फर्क नहीं पड़ता है क्योंकि अंतिम विश्लेषण आदेश, अनुलग्नक पी-4, याचिकाकर्ता को सुनने के बाद ही संशोधित किया गया था। हमें

ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान वित्तीय आयुक्त द्वारा यह उल्लेख करते समय अनजाने में गलती हो गई कि समीक्षा आवेदन की अनुमति दी गई थी। आदेश के संदर्भ से पता चलता है कि जिन शब्दों का उपयोग किया जाना आवश्यक था, उन पर समीक्षा आवेदन पर विचार किया जा रहा था। हमने ऊपर जो कहा है वह इस तथ्य से स्पष्ट होगा कि यदि समीक्षा आवेदन की अनुमति दी जानी थी, तो अंतिम आदेश चाहे आदेश अनुबंध पी-4 को रद्द करना हो या उसे संशोधित करना, उसी तिथि को पारित किया गया होगा। इसके बजाय, विद्वान वित्तीय आयुक्त ने मामले को बहस के लिए 26 अगस्त, 2003 को तय किया और उसके बाद याचिकाकर्ता को स्वीकृत स्थिति के अनुसार नोटिस जारी किया। इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, हमें विद्वान वकील के इस तर्क में कोई दम नहीं मिला कि याचिकाकर्ता को नोटिस जारी किए बिना आदेश, अनुबंध पी-4 की समीक्षा की गई थी। जहां तक योग्यता पर विवाद का सवाल है, यह उल्लेख करना पर्याप्त होगा कि अनुभवी कलेक्टर ने हरि चंद को गांव के लंबरदार के रूप में नियुक्त करते समय याचिकाकर्ता और हरि चंद की परस्पर योग्यताओं पर चर्चा की थी, साथ ही यह भी कहा था:-

"मैंने दोनों पक्षों द्वारा उठाए गए तर्कों को सुना है और इस संबंध में दिमाग लगाया है। केस फाइल का भी अवलोकन किया। यह स्पष्ट है कि श्री. हरि चंद श्री जॉग धीएन से अधिक शिक्षित हैं। वह मृतक नंबरदार का बेटा है। सरबराह के तौर पर भी काम किया। सरकारी परियोजनाओं में भी सक्रिय रूप से काम करते हैं। ग्राम पंचायत ने उनके मामले की अनुशंसा कर दी है। वह पंचायत के सदस्य हैं। नायब तहसीलदार रादौर और तहसीलदार जगाधरी ने भी उनका केस भेज दिया है। श्री जोग धियान के पक्ष में एकमात्र पहलू यह है की उनके पास अधिक कृषि भूमि है। अन्यथा, श्री. हरि चंद ने उन्हें सभी पहलुओं में पछाड़ दिया। ऊपर उद्धृत निर्णय वर्तमान मामले में भी लागू होते हैं।

अतः ऊपर बताए गए सभी तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए हम यह पाते हैं कि श्री हरि चंद गांव घेसपुर, उपतहसील रादौर, नंबरदार के पद पर नियुक्ति के लिए अधिक उपयुक्त उम्मीदवार हैं, मैं उन्हें श्री अमर सिंह की मृत्यु के कारण खाली हुई रिक्ति पर नया नंबरदार नियुक्त करता हूं। फाइल को रिकार्ड रूम में भेजा जाए। इस आदेश की प्रति एसडीओ सिविल, जगाधरी को भी भेजी जाए।"

(12) ऊपर दिए गए आदेश में विद्वान कलेक्टर द्वारा दर्ज किए गए तथ्य विवाद में नहीं हैं। हालाँकि, जब मामला विद्वान आयुक्त के समक्ष अपील में सुनवाई के लिए आया, तो कलेक्टर के आदेश को मुख्य रूप से इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि हरि चंद, जो आयुक्त के समक्ष प्रतिवादी थे, न्यायिक हिरासत में थे और उन्हें संदेह के लाभ के आधार पर बरी कर दिया गया था। भले ही न्यायिक हिरासत से निपटने के दौरान विद्वान आयुक्त द्वारा दिनांक 26 फरवरी, 2002 को पारित आदेश में, अपीलकर्ता शब्द का उल्लेख किया गया है, लेकिन

आदेश के संदर्भ से पता चलता है कि विद्वान आयुक्त इस धारणा के तहत थे जैसे कि हरि चंद को न्यायिक हिरासत में रखा गया और संदेह के लाभ के आधार पर बरी कर दिया गया। जब हरि चंद ने विद्वान वित्तीय आयुक्त के समक्ष एक पुनरीक्षण दायर किया, जिसमें जोग ध्यान (याचिकाकर्ता) को प्रतिवादी के रूप में पेश किया गया था, तो जोग ध्यान की ओर से आग्रह किया गया कि हरि चंद एक वर्ष के लिए न्यायिक हिरासत में रहे और एफआईआर संख्या 130, दिनांकित 30 दिसंबर, 1978 को उनके खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत मामला दर्ज किया गया था और अदालत ने उन्हें संदेह के लाभ के आधार पर आरोपमुक्त कर दिया था। इस पर विचार करते हुए, विद्वान वित्तीय आयुक्त ने इस प्रकार कहा: -

"वह उस मामले पर विचार करने में विफल रहे जो याचिकाकर्ता के खिलाफ दर्ज किया गया था जिसमें उसे संदेह के लाभ के आधार पर अदालत द्वारा आरोपमुक्त कर दिया गया था। (हरि चंद वित्तीय आयुक्त के समक्ष याचिकाकर्ता थे)। हालाँकि उस पर अभी तक इस बात पर विचार नहीं किया गया था कि वह लम्बे समय तक न्यायिक हिरासत में रहा और केवल इस तथ्य से गाँव में उस व्यक्ति की बदनामी होगी। इसलिए, मेरा मानना है कि ऐसे व्यक्ति को गांव का लंबरदार नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए।"

(13) जब समीक्षा आवेदन में, प्रत्यक्ष त्रुटि कि यह याचिकाकर्ता जोग ध्यान था और प्रतिवादी हरि चंद नहीं था, जो न्यायिक हिरासत में था, विद्वान वित्तीय आयुक्त के ध्यान में लाया गया, उन्होंने इस प्रकार देखा:-

"मैंने दोनों विद्वान वकीलों की दलीलें सुनी हैं और रिकॉर्ड देखा है। कलेक्टर ने याचिकाकर्ता को शैक्षिक योग्यता और सरबरा लंबरदार होने के आधार पर लंबरदार नियुक्त किया था क्योंकि उसके नाम की सिफारिश निचली अदालतों ने की थी। प्रतिवादी के खिलाफ आईपीसी की धारा 302 के तहत मामला दर्ज किया गया था। हालाँकि, उन्हें अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, कुरुक्षेत्र द्वारा संदेह के लाभ पर बरी कर दिया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि मामले का फैसला करते समय आयुक्त अंबाला द्वारा तथ्यात्मक गलती की गई है। आईपीसी की धारा 302 के तहत मामला दर्ज करना हरि चंद के खिलाफ दिखाया गया है जबकि यह जोग धियान के खिलाफ होना चाहिए। हरि चंद के खिलाफ उत्पाद अधिनियम के तहत एक प्राथमिकी भी दर्ज की गई है, जिसे बाद में मामले में शामिल नहीं पाए जाने पर रद्द कर दिया गया था। इस प्रकार उनके मामले को सुनवाई के लिए न्यायालय में नहीं रखा गया।"

(14) यह आदेश अनुलग्नक पी-4 में स्वयं विद्वान वित्तीय आयुक्त द्वारा की गई टिप्पणियों के मद्देनजर है कि एक व्यक्ति, जो हत्या के मामले में एक वर्ष तक हिरासत में रहा था, को लंबरदार के रूप में नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए, और फिर भी, जब यह तथ्य सामने आया कि, वास्तव में और वास्तविकता में,

यह याचिकाकर्ता ही है, जो एक हत्या के मामले में हिरासत में था, हालांकि बाद में बरी कर दिया गया था, और जब वित्तीय आयुक्त ने मामले को एक बार फिर से विचार करने के लिए रिमांड पर लेने का विकल्प चुना था। याचिकाकर्ता की उम्मीदवारी, कि हमने 30 जनवरी, 2004 को आदेश पारित किया था, जिसमें याचिकाकर्ता को नोटिस दिया गया था कि कलेक्टर द्वारा पारित आदेश, अनुलग्नक पी-2 को क्यों बरकरार नहीं रखा जाए और बाद के सभी आदेशों को रद्द क्यों नहीं किया जाए।

(15) हमने मामले पर पूरी तरह से विचार किया है और मामले के रिकॉर्ड की जांच की है और याचिका में की गई दलीलों को देखने के बाद और याचिकाकर्ता के वकील ने हमारे सामने जो दलीलें पेश कीं, हमने पाया कि हरि चंद के साथ पूरी तरह से अन्याय किया गया है। यहां चौथा प्रतिवादी। यह कानून के प्रस्ताव के रूप में बहुत अच्छी तरह से स्थापित है और यहां तक कि वित्तीय आयुक्त ने भी इसका उल्लेख किया है कि लंबरदार की नियुक्ति के मामले में कलेक्टर की पसंद को अंतिम माना जाएगा और इसे केवल तभी शून्य किया जा सकता है जब वह इसके खिलाफ हो। कमिश्नर द्वारा कलेक्टर की पसंद को मुख्य रूप से इस आधार पर परेशान किया गया था कि हरि चंद एक हत्या के मामले में शामिल था और उस सिलसिले में एक साल से अधिक समय तक हिरासत में रहा था और ऐसे लोग लोगों के बीच कोई विश्वास पैदा नहीं करेंगे, जिनके प्रति वह अंततः प्रतिनिधित्व करेगा। विद्वान वित्तीय आयुक्त ने, आयुक्त के आदेश के खिलाफ हरि चंद द्वारा की गई अपील को खारिज करते हुए, यह भी स्पष्ट रूप से दर्ज किया है कि कलेक्टर उस मामले पर विचार करने में विफल रहे, जो हरि चंद के खिलाफ दर्ज किया गया था, जिसमें उन्हें अदालत द्वारा संदेह के लाभ के आधार पर आरोपमुक्त कर दिया गया था और यह तथ्य अकेले ही गांव में उस व्यक्ति के लिए खराब प्रतिष्ठा पैदा करेगा। उन्होंने आगे कहा कि उनकी नजर में ऐसे व्यक्ति को लंबरदार के पद पर नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए। जब विद्वान आयुक्त और वित्तीय आयुक्त द्वारा की गई एक स्पष्ट गलती बाद में नोटिस में आई और विद्वान वित्तीय आयुक्त को गलती का एहसास हुआ और उन्होंने माना कि यह याचिकाकर्ता है, जो एक हत्या के मामले में शामिल था, न कि हरि चंद, जो अब तथ्य है रिट याचिका में ही स्वीकार किया गया, यह आश्चर्यजनक है कि याचिकाकर्ता को लंबरदार के रूप में नियुक्त करने के लिए उपयुक्त व्यक्ति कैसे माना गया। जब विद्वान आयुक्त और वित्तीय आयुक्त ने सोचा कि यह हरि चंद है, जो एक हत्या के मामले में शामिल था और एक साल से अधिक समय तक हिरासत में रहा था, तो निष्कर्ष यह निकला कि ऐसा व्यक्ति लंबरदार के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य है, लेकिन जब यह पता चला याचिकाकर्ता ने मामले को रिमांड पर लेना और मामले की दोबारा जांच करना कैसे जरूरी समझा, यह बिल्कुल आश्चर्यजनक है। इन टिप्पणियों पर, दिनांक 30 जनवरी, 2004 के आदेश के तहत, हमने याचिकाकर्ताओं को नोटिस दिया था कि कलेक्टर द्वारा पारित आदेश, अनुलग्नक पी-2 को क्यों बरकरार नहीं रखा जाए और बाद के सभी आदेशों को एक तरफ क्यों न लागू किया जाए। कोई उत्तर

आने वाला नहीं है. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यह स्वीकृत स्थिति है, इसलिए विशेष रूप से रिट याचिका में कहा गया है कि याचिकाकर्ता एक हत्या के मामले में शामिल था, भले ही यह कहा गया हो कि उसे बरी कर दिया गया था, और उच्च न्यायालय ने किस आदेश को बरकरार रखा था। यह सच हो सकता है कि एक बार जब किसी आरोपी को उसके खिलाफ लगाए गए आपराधिक आरोप से बरी कर दिया जाता है, भले ही संदेह का लाभ देकर उसे निर्दोष माना जाता है, लेकिन साथ ही, ऐसा व्यक्ति निश्चित रूप से जनता से सम्मान प्राप्त नहीं कर सकता है। लोग ऐसे व्यक्ति पर अधिक भरोसा नहीं कर सकते हैं और उस पर भरोसा नहीं कर सकते हैं, जो भले ही बरी हो गया हो, लेकिन जिस पर हत्या का मुकदमा चलाया गया हो और न्यायिक या पुलिस हिरासत में रहा हो। इसके अलावा, लंबरदार की नियुक्ति के मामले में कलेक्टर की पसंद अंतिम होती है। कलेक्टर के आदेश में किसी भी स्तर पर नियमों का उल्लंघन अथवा विकृति प्रदर्शित नहीं की गयी है। कलेक्टर के आदेश को मुख्य रूप से इस आधार पर रद्द कर दिया गया था कि हरि चंद एक हत्या के मामले में शामिल था, जो तथ्य बिल्कुल गलत निकला। दरअसल, यह याचिकाकर्ता है, जो एक हत्या के मामले में शामिल था। यदि विद्वान आयुक्त और वित्तीय आयुक्त द्वारा पारित आदेशों में ऐसी कोई पेटेंट त्रुटि हुई थी, तो ऐसे आदेशों को योग्यता के आधार पर बिना किसी चर्चा के रद्द कर दिया जाना चाहिए था क्योंकि कलेक्टर की पसंद को बरकरार रखा जाना चाहिए था। विद्वान वित्तीय आयुक्त ने, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, मुख्य रूप से इस आधार पर आयुक्त के आदेश को बरकरार रखा कि हरि चंद एक हत्या के मामले में शामिल था और इसलिए, लंबरदार के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य था, जिसका उल्लेख भी के अंत में किया गया है आदेश दिया कि उन्होंने दोनों व्यक्तियों की योग्यता की जांच की थी और वह आयुक्त के निष्कर्ष से सहमत होंगे कि जोग ध्यान के पास गांव में अधिक जमीन है और वह एक खिलाड़ी है और उसने अपने खेल कौशल के लिए ट्राफियां जीती हैं। यदि उम्मीदवारों के बीच परस्पर योग्यता पर विचार करने के बाद लंबरदार की नियुक्ति में कलेक्टर की पसंद अंतिम है, तो वित्तीय आयुक्त के लिए संबंधित उम्मीदवारों की योग्यता का पुनर्मूल्यांकन करने का कोई अवसर उत्पन्न नहीं हुआ था। इसके अलावा, जोग धियान की तुलना में स्नातक होने के संबंध में हरि चंद की योग्यता, जो केवल मिडिल पास था और कलेक्टर द्वारा उल्लिखित अन्य पहलुओं, जिसका प्रासंगिक हिस्सा ऊपर पुन: प्रस्तुत किया गया है, को नजरअंदाज कर दिया गया। फिर भी, हालांकि, जोग ध्यान की ओर से यह तर्क उठाया गया कि उनके रिश्तेदार ने खेलों में भाग लिया था, लेकिन वित्तीय आयुक्त ने दर्ज किया कि यह याचिकाकर्ता जोग ध्यान हैं, जो एक खिलाड़ी थे और अपने खेल कौशल के लिए ट्राफियां जीती थीं। वर्तमान याचिका दायर करके याचिकाकर्ता ने किसी भी खेल में अपनी भागीदारी के संबंध में कोई आपत्ति नहीं जताई है। बस इतना कहा गया है कि उनके परिवार के सदस्यों ने भी देश की सेवा की थी। विद्वान वित्तीय आयुक्त ने, इस न्यायालय के विचार में, मामले की खूबियों को आंशिक रूप से छूते हुए, स्थापित कानून का उल्लंघन किया कि उम्मीदवारों की परस्पर योग्यताओं पर अपीलीय या

पुनरीक्षण प्राधिकारियों द्वारा पुनर्विचार नहीं किया जा सकता है और ऐसा करते समय भी, गलत तथ्य दर्ज किए गए।

(16) रिमांड के आदेश में, जहां तक हरि चंद का सवाल है, यह उल्लेख किया गया है कि उसके खिलाफ एक उत्पाद शुल्क मामला दर्ज किया गया था, लेकिन ऐसा उल्लेख करते समय, पेटेंट तथ्य यह है कि उसके खिलाफ दर्ज एफआईआर रद्द कर दी गई थी, जो केवल तभी हो सकती थी, जब वह निर्दोष पाया गया, और इसके अलावा हरि चंद के खिलाफ एक भी चालान नहीं किया गया, पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया। उत्पाद शुल्क मामले की अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए रिमांड, जब स्वयं विद्वान वित्तीय आयुक्त द्वारा पारित आदेश में यह उल्लेख किया गया है कि एफआईआर रद्द कर दी गई है, तो यह व्यर्थ की कवायद होगी।

(17) ऊपर की गई चर्चा के मद्देनजर, हम रिट याचिका में कोई योग्यता नहीं पाते हैं और इसे खारिज करते हैं। हम जानते हैं कि रिट याचिका को खारिज करते समय, हम आयुक्त द्वारा पारित आदेश, अनुबंध पी-3, दिनांक 26 फरवरी, 2002 और साथ ही आदेश, अनुबंध पी-4 और पी-6, दिनांक 8 अप्रैल, 2003 और 2 दिसम्बर, 2003 को रद्द कर रहे हैं। भले ही उक्त आदेश हमारे सामने चुनौती के अधीन नहीं हैं, तथापि, हमारा विचार है कि विद्वान आयुक्त और वित्तीय आयुक्त ने कलेक्टर द्वारा पारित आदेश को पूरी तरह से अस्थिर आधार पर और स्पष्ट रूप से गलत तथ्यों को दर्ज करते हुए रद्द कर दिया। उन्हीं तथ्यों पर, जिन पर हरि चंद को लंबरदार के रूप में नियुक्त करने के लिए उपयुक्त नहीं पाया गया था, वही आधार, हालांकि, संबंधित अधिकारियों के पास यह मानने के लिए मान्य नहीं थे कि जोग ध्यान लंबरदार के रूप में नियुक्त होने के लिए उपयुक्त नहीं थे। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, जब आयुक्त और वित्तीय आयुक्त को यह बताया गया कि हरि चंद एक हत्या के मामले में शामिल था और एक साल से अधिक समय तक हिरासत में रहा था, तो उसे लंबरदार के रूप में नियुक्त करने के लिए अयोग्य पाया गया, लेकिन जब यह सही तथ्य सामने आया दरअसल जोग धियान, जो एक हत्या के मामले में शामिल था, उनके संज्ञान में आया, मामले को वापिस भेजने का निर्णय लिया गया। विद्वान वित्तीय आयुक्त द्वारा पारित आदेश विरोधाभासी हैं और इससे प्रतिवादी हरि चंद के साथ स्पष्ट अन्याय हुआ है। एक बार, न्यायालय को पता चलता है कि अन्याय हुआ है; किसी पार्टी के लिए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए, वह इसे पूर्ववत करने के लिए हमेशा खुला है। न्यायालय के बचाव में आने से पहले संबंधित पक्ष के लिए रिट याचिका के माध्यम से आंदोलन करना आवश्यक नहीं है। यदि अधूरे न्याय का गठन करने वाले तथ्य उच्च न्यायालय के ध्यान में आते हैं, तो उसके पास ऐसे आदेशों को संशोधित करने या रद्द करने की पर्याप्त शक्ति होगी। उच्च न्यायालय अकेले संविधान के भाग III द्वारा प्रदत्त किसी भी अधिकार के प्रवर्तन के लिए रिट, आदेश या निर्देश जारी नहीं करता है। यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226

में निहित प्रावधानों के मद्देनजर किसी अन्य उद्देश्य के लिए रिट, आदेश या निर्देश जारी कर सकता है। पार्टियों के बीच न्याय करने के उद्देश्य से किसी अन्य उद्देश्य के लिए शब्द निश्चित रूप से इसके दायरे में शामिल होंगे।

(18) ऊपर की गई चर्चा के मद्देनजर, हम रिट याचिका को खारिज करते हैं और आयुक्त द्वारा पारित आदेश, अनुबंध पी-3, दिनांक 26 फरवरी, 2002 और साथ ही विद्वान वित्तीय आयुक्त द्वारा पारित आदेश, अनुबंध पी-4 और पी-6, दिनांक 8 अप्रैल, 2003 और 2 दिसंबर, 2003 को क्रमशः को रद्द करते हैं। यदि विद्वान वित्तीय आयुक्त द्वारा पारित मामले को वापिस भेजने के आदेश के अनुसार कुछ कार्यवाही हुई हो, तो उसका कोई परिणाम नहीं होगा।

(19) इस आदेश की एक प्रति संबंधित कलेक्टर को उनकी जानकारी हेतु भेजी जाये।

अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उदेश्यों के लिये निर्णय का अंग्रेज़ी सस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

उदित अग्रवाल
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
करनाल, हरियाणा